Indian Streams Research Journal ISSN 2230-7850 Impact Factor : 3.1560 (UIF)
Volume - 5 | Issue - 3 | April - 2015 Available online at www.isrj.org

गढ़वाल के रचनाकार और उनकी साहित्यिक रचनाओं का गढ़वाल साहित्य में योगदान

मोहन सिंह
प्रवक्ता — हिन्दी रा.इ.का. नारायण नगर सिनांई जिला — चमोली (उत्तराखण्ड)।

Authors Short Profile

सारांश :

उत्तराखण्ड देव भूमि प्राचीन काल से ही तपस्वियों एवं साहित्य साधकों के आकर्षण का केन्द्र रहा है। यहॉ की हिमच्छादित पर्वत मालाऍ हरी—भरी, प्रशांत वनस्थली, घाटियॉ एवं निर्मल सरिताऍ तपस्वियों और साहित्य साधकों को अपनी ओर आकर्षित करती रही हैं। साहित्य के इतिहास में ऐसे कई प्रमाण है जिनसे विदित होता है कि व्यास, कालिदास से लेकर आधुनिक काल के साहित्य साधकों में विश्व कवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर, महादेवी वर्मा, बाबा नागार्जुन समेत कई अन्य साहित्यकारों ने यहॉ आकर साहित्य सृजन किया था। यहॉ के साहित्यकारों ने प्राचीन काल से लेकर आज तक देश की मुख्य धारा से जुड़कर संस्कृत, हिन्दी और जनपदीय बोलियों से संबद्ध पर्याप्त साहित्य सृजन किया है। आज भी उत्तराखण्ड़ के साहित्यकार संस्कृत, हिन्दी और अपनी स्थानीय भाषा और बोलियों में विविध विधावों से सबंद्ध साहित्य के सृजन के द्वारा साहित्य जगत में नए आयाम स्थापित कर रहे हैं। साथ ही उत्तराखण्ड़ के हिन्दी साहित्य को भी पर्याप्त साहित्यकार दिए हैं। आधुनिक हिन्दी साहित्य के विकास में यहॉ के हिन्दी साहित्यकारों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। उत्तराखण्ड़ ने हिन्दी साहित्य के प्रकृति के सुकुमार और छायावादी काव्य धारा के मुख्य स्तम्भ कवि के रूप में कविवर सुमित्रानन्दन पंत, हिन्दी के प्रथम मनोवैज्ञानिक कथाकार के रूप में इलाचन्द्र जोशी, नारी जीवन का अत्यन्त आत्मिक चित्रण करने वाली शिवानी, हिन्दी के प्रथम उत्तर— आधुनिक उपन्यासकार के रूप में मनोहर श्याम जोशी जैसी प्रतिभाऍ दी है। जिनका हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है।

गढ़वाल की उत्पत्ति

यह भारतवर्ष का उत्तरी हिमालय प्रदेश, नेपाल और सिक्किम से कश्मीर पर्यन्त पॉच खण्ड़ों में शास्त्र द्वारा विभक्त है। यथा –

खण्ड़ाः पञ्च हिमालयस्य कथिता नेपाल कूर्माचलौ।
केदारोऽथ जलंधरोऽथ रूचिरः कश्मीर संज्ञोंऽन्तिमः।।

अर्थात पहला खण्ड़ नेपाल प्रदेश, दूसरा खण्ड़ कूर्माचल (कुमाऊँ) तीसरा खण्ड़ केदारखण्ड़ (गढ़वाल) चौथा खण्ड़ जालंधर अर्थात पंजाब का पर्वतीय भाग और पॉचवा खण्ड़ कश्मीर है।

इन पॉचों खण्ड़ों में से केदारखण्ड़ अब गढ़वाल के नाम से विख्यात है और पुराणों में इस देश का नाम 'हिमालय' या 'केदारखण्ड़' के नाम से पाया जाता है। इसका क्रम हरिद्वार से प्रारम्भ होता है। 'गढ़वाल' शब्द योगरूढ़ि है, अर्थात 'गढ़वाल' 'वाला' प्रत्यय है, जिससे गढ़वाल शब्द योगिक हुआ है। 'गढ़' शब्द उन पहाड़ी किलों को बोधक है जो किले पर्वतों की चोंटियों पर अधिकता से पाये जाते है। किले के पूर्वकाल में छोटे–छोटे ठाकुरी राजाओं, सरदारों और थोकदारों के थे। उन राजाओं और सरदारों के राज्य विभागों के नाम भी पृथक–पृथक थे, जो अब परगनों और पटिट्यों के नाम से विख्यात है। जब पॅवार वंशज महाराजा अजयपाल ने गढ़वाल के सब ठाकुरी राजाओं और सरदारों को विजय कर उनके राज्यों को एक साथ मिलाकर एक सुविस्तीर्ण राज्य स्थापित किया, तब इस प्रदेश का नाम अधिक गढ़ होने के कारण 'गढ़वाल' रखा गया। गढ़वाल नाम इस देश का सम्वत् 1557 और सम्वत् 1572 विक्रमी के बीच अर्थात सन् 1500 से 1515 ई0 के बीच रखा जाना पाया जाता है। तब से यह देश गढ़वाल नाम से प्रसिद्ध है। मुसलिम इतिहास लेखकों ने अपने इतिहास में इस देश को प्रायः 'शिवालिक' के नाम से या 'कुमाऊँ' के नाम से लिखा है। कहा जा सकता है कि मुसलिम इतिहास लेखकों को इस देश के ऊपरी भाग का उस समय कुछ पता नही था। उनके हमले प्रायः शिवालिक या कुमाऊँ की तराई तक ही होते रहे। इससे उनको इस देश या क्षेत्र का पता बहुत पीछे लगा। इस केदारखण्ड़ में यद्यपि असंख्य तीर्थ भरे पडे है। तथापि चार तीर्थ मुख्य जाने जाते है। बद्रीनाथ, केदारानाथ, गंगोत्री, यमुनात्री। प्रायः श्रद्धालु यात्री इन चारों धामों की यात्रा करते है। यह केदारखण्ड़ हिमालय प्रदेश हरिद्वार तक माना जाता है। इसी से यह सम्पूर्ण क्षेत्र हिमालय प्रदेश कहा जाता है। इस देश का उत्तरी भाग, जो निर्जन और अगम्य है और जहॉ हिम और हिम के दरारों के अतिरिक्त कुछ नही, सारें गढ़वाल की तुलना में तीसरा हिस्सा है तब भी हेमन्त और शिशिर में तो इस देश की सारी भूमि, जो प्रायः 6 से 7 हजार फीट और उससे ऊॅची है, हिमच्छादित हो जाया करती है। परन्तु यहॉ अभिप्रायः हिमालय की उन चोटियों से है जो गढ़वाल में सबसे ऊॅची और प्रतिष्ठित मानी जाती है। हिमालय की विद्यमानता ही इस खण्ड़ की प्रधानता का कारण है।

वर्तमान में गढ़वाल क्षेत्र पौड़ी, टिहरी, चमोली, रूद्रप्रयाग, उत्तरकाशी, देहरादून, हरिद्वार आदि जिलों में विभक्त है। इस क्षेत्रों की बोली 'गढ़वाली' है। सन् 2011 की जनगणना के अनुसार 5886182 यहॉ की जनसंख्या है।

गढ़वाली भाषा (बोली) का उद्भव

डॉ0 ग्रियर्सन, डॉ0 धीरेन्द्र वर्मा, डॉ0 नामवर सिंह, डॉ0 उदय नारायण तिवारी, डॉ0 हरिदत्त भट्ट 'शैलेश' आदि विद्वानों ने गढ़वाली भाषा की उत्पत्ति शौरसेनी अपभ्रंश से मानी है। गढ़राज्य में गढ़वाली राजभाषा होने के कारण गढ़ नरेश के सभी शिलालेख ताम्रपत्र और आदेश पत्र गढ़वाली भाषा में मिलते हैं। तदोपरान्त विभिन्न गढ़वाली साहित्यकारों ने अपनी–अपनी सृजन क्षमता के अनुसार यहॉ की भौगोलिक विषमता एवं प्राकृतिक सुन्दरता का गद्य एवं काव्य के रूप में भी रचना की है।

गढ़वाली साहित्यिक रचनाओं का आरम्भ

गढ़वाली गद्य का 500 वर्ष से भी अधिक पुराना संवत 1512 (सन् 1455) को उस लेख से मिलता है। जो राजा जगतपाल के राज्यकाल में अंकित किया गया था।

''श्री संवत 1512 शाके 1377 चैत्रमासे शुक्लपक्ष चतुर्थी तिथौ रविवासरे जगतीपाल राजवार ले शंकर भारतीय कृष्ण भट्ट की सर्वभूमि रामचन्द्र भट्ट का जामिनी कीर्ति सर्वकर अकर सवदान गुदान नाट की नटाली मूवे की औताली रामचन्द्र ले पौनी''...... ।

ठस लेख में 'नाट' की 'नटली' और 'मूवे' की 'औताली' विशेष प्रथाओं को सूचित करती है। जिस व्यक्ति की 'नाट' अर्थात संतान न होने से नस्ति हो जाती थी उस व्यक्ति की सम्पत्ति 'नटली' के रूप में राजा को मिलती थी। 'मूवे' अर्थात यदि कोई व्यक्ति पुत्रहीन मर जाता था। तो उसकी 'औताली' के अन्तर्गत चल–अचल सम्पत्ति मृतक की विधवा या अविवाहित पुत्रियों को दी जाती थी। गढ़वाल में ही देवप्रयाग में एक दूसरा गद्य लेख मिलता है। जो आज से 396 वर्ष पहले गढ़वाल के राजा मानशाह के समय का है। जिसकी कुछ पंक्तियॉ दृष्टव्य है।

''श्री शाके 1520 संवत् 1665 मासे श्रावण, पक्ष कृष्ण, तिथौ चतुर्थी, नक्षत्रे रेवती, वोर शुक, श्री राजाधिराज श्री मानशाह राज्ये श्री ज्योतिराम मठ्यते श्री महादेव नारायण व्यास काशी न गुमट कृतम। हरीदास कारीगर न मंडय कृतम कृसो कारीगर का भयोन सुभम्।''

इस लेख में 'भयोन' अर्थात भाइयों ने गढ़वाली का प्रयोग है। लगभग 500–600 वर्ष पूर्व गढ़वाली और कुमॉऊनी दोनों भाषाऍ एक–दूसरे के बहुत निकट थी। दोनों भाषाओं का विकास आरम्भ में एक ही स्रोत 'सौरशेनी' अपभ्रंश से हुआ है। गढ़नरेशों के शासन काल मं अनेकों पंवाड़ों, उत्सव गीतों का प्रचलन था। गढ़वाली में सबसे पुराना लिखित गीत फतेहशाह के राज्यकाल का है :–

''श्रीनगर का बीच, काटि जालि खाई।
को बचावो भगोत सिंह, को बचावो फत्तेशाही।।''

गोरखाली शासन में भी बहुत लोकगीत प्रचलित थे। जिनमें से एक में कहा गया हैः–

''उकाली को पाणी, हे गोरख्या भैना।''

सन् 1905 में ''गढ़वाल'' पत्रिका के प्रथम अंक में सत्यशरण रतूड़ी जी का 'उठा गढ़वालियों' शीर्षक छपी थी। जिसे गढ़वालियों के लिए जागृति का विगुल माना जाता है।

''उठा, गढ़वालियों! अब त समय यो सेण को नी छ!
तजाई मोह निद्रस कू अजौं तैं जा पड़ी हीं छ!
जरा सी ऑखा त खोला, कनो अब घाम चमक्यूॅ छ!
स्वदेशी गीत कू एकदम, गुंजावा स्वर्ग तैं भायों!''

सन् 1924 में शिवनारायण बिष्ट ने गढुसुम्याल का पंवाड़ा प्रकाशित किया। सन् 1938 मं सदानंद सेमवाल ने 'जीतू बगड्वाल का पंवाड़ा' संग्रह कर प्रकाशित किया। सन् 1928 में पं0 रामनरेश त्रिपाठी ने अपने ग्रंथ 'कविता कौमुदी' भाग–3 में गढ़वाली भाषा का एक झुमैलो गीत प्रकाशित किया। उसका कुछ अंश इस प्रकार हैः–

''आई गीन रितु बौड़ी, दांई जसु फेरो।

उबा देशी उबा जाला, उंदा देशी ऊंदो।।
मौलि गेग कई भांति का फुलेरी ड़ाली।
फूली गेन वणू मांग्ये ग्वीराला बुरांसी।।''

पं0 तारादत्त गैरोला का जन्म 6 जून 1875 को टिहरी के बडियारगढ़ पट्टी के लालढुंग गॉव में हुआ था इनका काव्य आख्यान 'सदेई' गढ़वाली साहित्य को इनकी महान देन है। भाव, भाषा काव्य सौन्दर्य तथा मार्मिक प्रसंगों के वर्णन की दृष्टि से यह गढ़वाली आख्यान काव्यों में अद्वितीय है। रामी के गीत समान 'सदेई' गॉव–गॉव में प्रचलित है :–

''हे ऊॅची डांड्यों तुम नीसी जावा।
घणी कुलायों तुम छांटि होवा।।
मेकू लगी छ खुद मैतुड़ा की।
बाबाजी को देश देखण देवा।।''

गढ़वाली के करूणारस के मनोहर काव्य के रचियता पं0 श्रीधर जमलोकी जी ने गढ़वाली में अश्रुमाला रोन्देडू एकबीसी, उत्तरामचरित्र, वृत्तमाला तथा दुंद भी डिमडिम काव्य की रचना की। अश्रुमाला बाल विधवा की दयनीय दशा पर आधृत, प्रथम काव्य है। इस काव्य की नायिका रूकमणी खिड़की से दूर क्षितिज पर चन्द्रमा को देखती हुई आंसू बहाती हुई सोचती है। चन्द्रमा के समान मेरा जीवन भी डूब रहा है। इस जीवन में मेरे हाथ क्या लगा?

''ऑसू चोंदा टपटप कुयेड़ी घणी लौंकणी की।
मोरी से ही देखदी रूकमणी जोन तैं बूडणी की।।
रूक्मा तैं भी यन लगदू क्या जोन का साथ–साथ।
बूड़या मेरा क्षण सुनहला, रैग्यूं भी खालि हाथ।।''

डॉ0 शिवा नन्द नौटियाल एक राजनीतिज्ञ के साथ–साथ अच्छे साहित्यकार थे। उनकी कृतियों में शैलबाला के ऑसू, कर्जकाव्यों (उपन्यास) वण का फूल (एकांकी), धार मा की गैणी, चुफरा नंदा देवी दैणी हवे जा आदि कहानियॅा है। ललित मोहन थपलियाल के गढ़वाली नाटक खाडू लापता, आछरियों का ताल, घरजवैं, मोहन लाल नेगी का जोनि पर छापु किले, बुंराश का पीड़ (कहानी संग्रह) महावीर प्रसाद गैरोला का पार्वती अक्कलवर को रैमोड़ी, कपाली का छमोट काफी चर्चित है। उत्तराखण्ड़ के प्रसिद्ध साहित्यकार डॉ0 शिव प्रसाद डबराल ने 25 ऐसे दुर्लभ गढ़वाली काव्यों पर आलोचनात्मक भूमिका लिखकर प्रकाशित किया, जो लुप्त होने के कगार पर थे। डॉ0 डबराल की विद्वतापूर्ण भूमिका पढ़ने से विदित होता है कि गढ़वाली कितनी समृद्ध भाषा एवं बोली है।

''खरड़ी डांडी पुंगडी लाल। धरति को मुकुट भारत को भाल हमरू गढ़वाल यख की संस्कृति–गिंदडु, भुज्यलु, ग्यगडु, गड्याल। सांस्कृतिक सम्मेलन उठ्वाड़, महानबलि–नारायण बलि। टेक्नीशियन जांदरौ सल्लि। दानुमदान–मुकदान। बच्चूं निरभगी। क्वयों भग्यान परोपकारी–बेट्यों को पर्वाण। नेता–जैन सैणा गोरू भ्याल हकाण। समाज सुधारक–जैन छन्यूॅ बैठी शराब बणाण। खोज–बुजिना शोध सुपिना............ आदि आदि।

भूख–प्यास मनुष्य को आदि काल से सताते आए है। पानी बेशक पहाड़ में मिल गया हो पर वर्षभर की भूख मिटाने शायद ही उसे कभी भरपूर खाना मिला पाया हो दयाराम डोभाल की चार पंक्तियॅा भूख की चौपाया ही नही पूरी रामायण बांचती ळें

''भुक्खि छौं ब्यालि बटी, मीमा छ एक मुट। आज खौं कि भोल। जमनौं बटे ई घंघतोल''।

निरंजन सुपाल इसी बात को 'ग्याडु दादा' शीर्षक में इस तरह कहते है:–

'ग्याडु दादा धैं लंगौदु। रवटि ल्हावा दौड़िकी''।

सदियों से पहाड़ में अभावग्रस्त जिन्दगी झेलते लोगों के व्यथा चित्र भी नई उपमाओं के साथ दिखाई पड़ते है:–
''मीं तै उख्र्याला की घाण सी। क्वी ढोलिग्ये क्वी कूटि ग्ये''।

मुझे ओखली में डालने वाली घाण की तरह कोई डाल गया कोई कूट गया। प्रेम लाल भट्ट की 'विडम्बना' शीर्षक रचना ने कविता को एक नया मोड दिया जिसमें वे पहाड़ के देव भूमि होने के दम्भ एवं झूठी मान्यताओं को सिरे से नकारते है:–

''कैन बोलि या रिसी मुन्यॅु की द्यो अर द्यब्तों की धरती च तुम्ही बता क्या रूखा माटा मा फसल प्यार की उग सकणी च जख भूम्याल भूखा म्वना छन मेघ तिस्वाला ही घुमणा छन वख बल कबि द्यबता रैंदा छा बात क्या या तुम तैं खपणी च। तुम्ही................... ।

आधुनिक नवोदित उदीयमान कवि नरेन्द्र गुंजन 'लोक' के कवि है। उन्होंने अपनी सनक्वाल नामक कविता संग्रह में पहाड़ के दर्द को अपनी कलम से उकेर कर उनका प्रत्येक शब्द पीड़ा का 'अन्नायक' है।

दर्द की कोई परिभाषा नही होती, किन्तु संवेदना के स्तर पर इससे एक अहसास निर्मित किया जाता है। सम्भवतः पहाड़ की प्रत्येक समस्या, वह चाहे यहॉ की नारी से सम्बन्धित हो चाहे सामाजिक सरोकारों से कवि ने सबको विषयवस्तु बनाकर उनमें प्राण भरें है। उनकी नारीमन को स्पर्श करती भाव–भूमि का उदाहरण द्रष्टव्य है –

लाठि सि काया, मुखड़ी मा चिन्ता, भरे विचारी कु होली?
उमर जवानी कि, दिखेण कि दानी सी, काम की मारी कु होली।

वस्तुतः उपर्युक्त पंक्तियों को पढ़कर, पहाड़ की रीढ़ माने जाने वाली उस स्त्री का बिम्ब मानस पर उभर जाता है। जो दिन रात कमर तोड़ श्रम करके अपने परिवार का पोषण कर रही है। कवि ने समाधान के स्वरों को भी अंकित किया है।

सुपिनों का पुल बणौण वाली, पाड़ की नारी तु होली।
लाठि सि काया मुखड़ी मा चिन्ता, भरें विचारी कु होली।।

कवि ने समसामयिक घटनाओं पर पैनी नजर रखते हुए सिद्ध कर दिया है कि साहित्य सृजन समाज का वास्तविक साक्षी होता है। जिसे समाज में एक साक्ष्य की भूमिका का भी निर्वहन करना पड़ता है। जैसे– टिहरी बॉध निर्माण एक ओर देश के विकास की तरफ बढ़ता हुआ एक कदम है। इस पक्ष को एक आविष्कारक अनुभव कहता है। उसी घटना का एक सामाजिक एवं सांस्कृतिक पहलू भी है। कल तक जो लोग एक ही गॉव में आग–पानी मिल बॉटकर जीवन यापन करते थे। वे आज बिखर चुके है तथा उनके सुख–दुःख में आपसी सहयोग को विभाजित कर दिया गया है। गढ़वाली काब्य में व्यक्त किया है :–

घुघती का गीतों मा, कफू की भौंण मां।
सैसिर का डांडा, बेटूला का रोण मां।।
जब मोती झिलमिलाला, ब्योली की नथुल्यों मां।
बुरांश का मुंड मॉ, फ्योली की लटुल्यों मॉ।।
हिटेरू भौरों की जब टोलि गुण मुणाली।
टिहरी याद आली, हॉ तेरी याद आली।।

प्रत्येक शब्द अपनी आभा से संवेदना की जागृत करने में समर्थ है। किसी भी कवि की चेतना का सार—तत्व भी इसी बिन्दु पर निर्मित किया जा सकता है। जब वह अपनी संवेदना से अलौकिक प्रेम के द्वार उद्घाटित कर सके।
चोर, बेईमानी डाल्यो—डाल्यो छन फल्यां,

हर्यां—भर्यां पत्ता अब भ्वां छन झड्यां।
कांडों का जंगल मा अपणु बण ना लगौ,
देख—देख खारा मंजि चोट न लगौ।।

कवि ने समाज में व्याप्त अराजकता के प्रति क्षोभ प्रकट करते हुए स्पष्ट किया है :—

कवि 'गुजन' ने अकर्मण्य रूप से जो जीवन यापन कर रहे है। उन्हें अपनी काव्य की पंक्तियों के माध्यम से सतर्क किया है कि उठो अभी वक्त बचा है अपनी संस्कृति को बचाओ साथ समाज के शोषण को समाप्त कर एकरूपता समाज में लाओ, ताकि समाज में सौहार्द रूपि वातावरण स्थापित किया जा सके।

गिचि हुंगारा भरणि अज्यों, हाथ खुटा ग्वाया छन।
ज्वनि कि उमर मां किलै, बाबा पर अंग्वाल छ।।
उठ! अज्यों सनक्वाल छ।

गढ़वाली साहित्य जिसने गढ़वाल की सुन्दरता, महानता को अपने आप में समेट कर रखा है जिससे ज्ञात होता है कि गढ़ोंका यह देश अपनी लोकप्रियता एवं संघर्ष कि लिए विख्यात है। गढ़वाली रचनाओं की कुछ पुस्तकें निम्नवत है :—

1. सत्यनारायण रतूडी — उठा गढ़वालियों (गढ़वाली काव्य)
2. भवानी दत्त थपलियाल — जय विजय (पहला गढ़वाली नाटक) फौंदार की कछड़ी, प्रहलाद नाटक, बाबाजी की कपाल क्रिया (नाटक)
3. तारादत्त गैरोला — सदेई गीत (गढ़वाली काव्य)
4. बलदेव प्रसाद — सतियों का सत, रामीजसी ध्यानमाला
5. शिवनारायण बिष्ट — गढुसुम्याल का पंवाड़ा
6. भोलादत्त देवरानी — मलेथा की कूल, नलदमयन्ती भाग — 1, 2
7. सदानन्द जखमोला — प्रेमी पथिक (गढ़वाली काव्य)
8. श्रीधर जमलोकी — रूक्मा, बालविधवा अश्रुमाला, गढ़ दुर्दशा, राष्ट्ररक्षा (गढ़वाली काव्य)

9. धर्मानन्द जमलोकी — गढ़वाली मेघदूत
10. धस्माणा — ढोल सागर संग्रह (गढ़वाली काव्य)

सुझाव

किसी भी समाज या क्षेत्र की पहिचान वहॉ का साहित्य होता है, लोक साहित्य किसी भी क्षेत्र और समाज की अभिव्यक्ति का एक सशक्त माध्यम होता है। यह अभिव्यक्ति उस समाज की भाषा और बोली द्वारा व्यक्त की जा सकती है। परन्तु भौगोलिक स्थिति के आधार पर प्रत्येक पॉच–दस किमी की दूरी पर इस भाषा अथवा बोली में अंतर आ जाता है। आज कविगण अनुभूति एवं चिंतन के महत्व को समझते हुए कविता का एक नया स्वरूप लेकर सामने आ रहे है। चिन्तन में राष्ट्रीयता के साथ–साथ मानव मन की बहुआयामी सोच के भी दर्शन होते है। पलायन, बेरोजगारी, पर्वतीय जीवन का यर्थात टूटती सांस्कृतिक विरासत, महिलाओं का कठोर जीवन, राजनीति के गिरते मूल्य समाज में पनप रहे अपराध, चिपको एवं उत्तराखण्ड़ आन्दोलन व राज्य बनने के पश्चात हताशा व निराशा के स्वर प्रमुख रूप से कविता में दिखाई पड़ते है। परमपरागत शिल्प एवं काव्य को पीछे छोड़ते हुए भरमाऊ जुमलों में न भरकर कविता यर्थात के धरातल पर नजर आनी चाहिए। जिससे समाज में लोगों को प्रेरणा मिले एवं लोग अपने साहित्य एवं संस्कृति का महत्व समझने लगे। हमें इस प्रकार के काव्य का सृजन करना चाहिए जो सम्पूर्ण आवाम में परिवर्तन कर दे, तथा मानव एक पुष्पमाला की तरह बन जाय जिसमें हर फूल अपनी सुन्दरता व खुश्बू से वातावरण को सुगन्धित कर दे। ऐसी ही सुगन्ध हमारे गढ़वाल साहित्य की होनी चाहिए जो सम्पूर्ण विश्व को अपने आगोश में ले ले। ऐसी ही प्रतिभा अबोध बंधु बहुगुणा में भी थी। जिन्होंने गढ़वाली में पहला महाकाव्य 'भूम्याल' रचकर एक बहुत बड़ी प्रसिद्धि प्राप्त की थी। पहाड़ के लोगों की आंकाक्षाऍ–अपेक्षाऍ बहुत थी। पूरी कहॉ होनी थी। सोच बदली, कठोर जीवन शायद पहाड़ को शॉप है –

कवि हरीश जुयाल 'कुटज' कहते है।''म्यारा दु:ख इथगा, जथगा गैणा आसमान मा, माला मिलीं अंसधर्यों कि मिथैं बरदान मा।''

रचनाऍ इस प्रकार की होनी चाहिए जो समाज को वर्ग विभक्त के रूप नही, बल्कि एक अविभक्त सगुण इकाई के रूप में व्यवस्थित करें। कविता की भाषा जीवन्त बोलचाल की भाषा के निकट रहनी चाहिए। साथ ही उसमें शिल्प की सजगता और साधना भी अनिवार्य है। कवि–कर्म, कवि के स्वभाव और देश काल की जरूरत पर निर्भर होता है। इसलिए कि रचना केवल विचार से नही निकलती, इन्द्रिय–मन–प्राण–बुद्धि समेत संवेदन–तंत्र की सक्रीयता में से उपजती है। सच्चा सृजनात्मक लेखन मनुष्य के संवेदन को बदलता है, उसमें विस्तार करता है, इसलिए साहित्य में परिवर्तनकारी शक्ति निहीत होती है।

सारांश

उत्तम कोटि का साहित्य अपनी सुमधुर भावना, तीव्र अनुभूति और सीधे कथ्य की सुन्दरता से हृदय को सहलाने वाली भंगिमा की दृष्टि से अपूर्व कहा जा सकता है। गढ़वाल साहित्य भी एक ऐसा ही साहित्य है जिसे दूर–दूर तक लोकप्रियता हासिल हुई है। इन कविताओं से गढ़वाल की पहाड़िया सदियों से गुंजायमान है। इस धरती की माटी का कण–कण साहित्य के स्वरों में कवितामय हो गया है। इसलिए गढ़वाल का नाम आए और गढ़वाल साहित्य की स्मृति न उभरें यह कैसे हो सकता है। इस धरती के सुनहले रोमानी दिन की थाह लेनी है तो गढ़वाल साहित्य के लोक–कंठ से झरते स्वर काफी है। आदि देव भगवान शंकर की तपस्थली महाधिराज हिमालय जो आदि काल से तपस्वियों की तपस्थली के साथ–साथ आध्यात्मिक प्रेरणा का भी स्रोत रहा है। उसी मनोरम पर्वत–श्रृंखला की उपत्यका से इस गढ़वाल साहित्य का शुभारम्भ होता है।

''आह से निकला होगा गान'' की तर्ज पर ही कवि का यह कथ्य तथ्यपूर्ण है कि प्रेम के नवनीत से ही कविता जन्म लेती है। इसलिए साहित्य रूपी रस को प्राप्त करने हेतु उठो जागो जागृति का यह सन्देश जन–जन तक पहुॅंचाओं, इसी जागृति से हमें गढ़वाल साहित्य की असीम अनुभूति प्राप्त होगी।

प्रस्तुत गढ़वाल साहित्य की आवश्यकता के संबंध में यहॉं पर मात्र इतना ही कहना है कि आधुनिक युग के निरन्तर बढते हुए नगरीकरण एवं वैश्वीकरण के प्रभावान्तर्गत हमारे सामाजिक साहित्यिक एवं सांस्कृतिक जीवन से सम्बद्ध अनेक परम्पराओं के आर्कषणों का एवं उपयोगिता का भाव निरन्तर कम होता जा रहा है। ऐसी स्थिति में स्वभावतः आशंका है कि अचिर भविष्य में ही हमारे बचे–खुचे ऐतिहासिक साहित्यों की भी यही स्थिति हो सकती है।

अतः गढ़वाल की परम्परागत सामाजिक, सांस्कृतिक तथा साहित्यिक परम्पराओं की महत्ता को संचित रखने में अभिरूचि रखने वाले बौद्धिक वृत्ति के जागरूक लेखकों एवं साहित्यकारों के लिए आवश्यक है कि वे, यथोपलब्ध रूप में ही सही, अपनी भावी पीढ़ीयों को जानकारी देने हेतु साहित्य के संकलन में अपनी बौद्धिक क्षमता का यथाशक्ति योगदान करने का प्रयत्न करेंगे।

हमारी भावी पीढ़ीयों के जिज्ञासु साहित्यकारों को अपने गढ़वाल के साहित्य के अतीत की स्थितियों की जानकारी देने में विशेष रूप से सहायक हो सकेगा।

इसके अतिरिक्त इस शोध सामायिक लेख के लिए संकलित एवं विवेचित साहित्य सामग्री के विषय में इतना और भी कहना है कि ज्ञान के किसी भी क्षेत्र के लिए कोई भी व्यक्ति सर्वज्ञ होने का दावा नही कर सकता है। किसी भी ज्ञान का अर्जन वह अपने प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष स्रोतों के आधार पर ही कर पाता है।

अतः प्रस्तुत शोध पत्र को लिखने की जानकारी को जुटाने के लिए अपनी व्यक्तिगत जानकारी के अतिरिक्त अपने पूर्ववर्ती एवं समसामयिक लेखकों द्वारा लिखित साहित्य, लेखों का सहारा लेना पड़ा है। सन्दर्भ सूची में अधिकतम लेखकों को सन्दर्भित करने का प्रयास किया गया है। भूलवश सभी का उल्लेख न हो पाने से इसका पूरा दावा भी नही किया जा सकता है।

सन्दर्भ संकेत :–

1. उत्तराखण्ड़ के रचनाकार और उनका साहित्य – भाग –2 प्रधान संपादक – प्रोफेसर देव सिंह पोखरिया, संपादक– डॉ0 जगत सिंह बिष्ट

1. उत्तराखण्ड़ का गढ़वाली साहित्य – डॉ0 विनय कुमार डबराल
2. समकालीन गढ़वाली कविता : सन्दर्भ एवं सरोकार– डॉ0 देवेन्द्र जोशी
3. उत्तराखण्ड़ का कथा साहित्य – क्षितिज शर्मा
4. समकालीन साहित्य को रमेश चन्द्र शाह का योगदान – डॉ0 श्रीमती माया जोशी
5. उत्तराखण्ड़ की जनजातिय बोलियॉं और उसका साहित्य – डॉ0 एम0एस0 पॉंगती

(अंकित प्रकाशन चन्द्रावती कॉलोनी हल्द्वानी – 263139)

2. गढ़वाल का इतिहास – डॉ0 यशवन्त सिंह कठोच (वीरेन्द्र सिंह पुण्डीर भागीरथी प्रकाशन गृह कवर्ड मार्केट – बौराडी नई – टिहरी)

3. उत्तराखण्ड़ के लोकोत्सव एवं पर्वोत्वस – प्रोफेसर डी0डी0 शर्मा (अंकित प्रकाशन चन्द्रावती कॉलोनी पीपलकोटी हल्द्वानी – 263139)

4. सनक्वाल – नरेन्द्र 'गुंजन'(विन्सर पब्लिशिंग कम्पनी डिस्पेन्सरी रोड देहरादून – 248001)

5. समसामयिक घटना चक्र – भारत की जनगणना – 2011 एवं विश्व जनसंख्या – समसामयिक घटना चक्र प्रकाशन 8/9 विश्वविद्यालय मार्ग इलाहाबाद – 211002